International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2016; Page No. 31-33

हिन्दी साहित्य सामाजिक व्यवस्था का वास्तविक परिदृश्य

भावना दहिया

Lecturer, Govt. Senior Secondary School, Rohtak, Haryana, India

प्रस्तावना

समाज में व्याप्त गतिविधियों का चित्रण साहित्य करता है। समाज सम्मत एवं समाज विरोधी दोनों विचारों को जन समूह के सामने रखता है। हिन्दी साहित्य के प्रत्येक विधाओं में सामाजिक व्यवस्था का वास्तविक परिदृश्य दिखाया गया है। इन विधाओं में हिन्दी उपन्यास महत्वपूर्ण है क्योंकि अधिकांश उपन्यासों में कुछ न कुछ सामाजिक ढाँचे का वर्णन अवश्य रहता है। जहाँ तक रामधारी सिंह दिवाकर लिखित हिन्दी उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' की बात की जाय, यह उपन्यास पूर्णतः सामाजिक सत्ता पर केन्द्रित है। लेखक ने समाज के प्रत्येक पक्ष को छूने का प्रयास किया है।

पृथ्वी पर अनेक जीव–जन्तु एवं पेड़ पौधे है। इसमें मनुष्य सर्वाधिक बुद्धिमान प्राणी है। वह अपने बौद्धिक क्षमता के सहारे अन्य जीव–जन्तु एवं पेड़ पौधों पर प्रभाव स्थापित किए है और प्रभाव स्थापित करके प्रत्येक वस्तु का उपयोग कर रहा है। इतने पर भी मनुष्य में संतोष नहीं है। वह अन्य मनुष्यों पर भी प्रभाव स्थापित करने का भाव रखता है। इसके लिए अलग–अलग तकनीक का प्रयोग करता है। कुछ व्यक्तियों पर धन का प्रयोग करके, कुछ पर शक्ति का प्रयोग करके, कुछ पर विचार का प्रयोग करके अपना प्रभाव बढ़ाता है। यह प्रभाव सत्ता का परिचायक है। सत्ता के दो पक्ष होते हैं। एक मानव कल्याण के लिए स्थापित सत्ता और दूसरी स्वयं के सुख–सुविधा एवं वैभव के लिए स्थापित सत्ता। कुछ विद्वानों ने कल्याणकारी सत्ता को स्वीकार किया है। परन्तु अधिकतर विद्वानों ने सत्ता के दोनों पक्ष को इन्कार दिया है। लार्ड एक्टन का विचार है–''सभी प्रकार की सत्ता व्यक्ति को भ्रष्ट करती है। पूर्ण एवं अनियंत्रित सत्ता व्यक्ति को पूरी तरह भ्रष्ट कर देती है।''[1] इसी प्रकार के विचार विष्णु प्रभाकर ने लिखा है–''सत्ता की प्रकृति आक्रमणशील और अधिपत्य जमाने वाली है। सत्ता स्थायी भी नहीं होती। निरन्तर परिवर्तित और स्थानान्तरित होती रहती है। ऐसी स्थिति में उससे जुड़ी व्यवस्था अवसरवादी और क्रय–विक्रय की राजनीति तथा नाना रूप शोषण करने की प्रवृत्ति का शिकार हो जाती है।''[2]

कुछ विद्वान सत्ता का अभिप्राय सिर्फ राजनीति तक सीमित मानते हैं, यह गलत है, सत्ता के विविध आयाम होते हैं। इसमें राजनीति, समाज, अर्थ, धर्म के अलावा अनेक पक्ष आते हैं। प्रस्तुत लेख में मात्र सामाजिक सत्ता पर विचार विमर्श किया गया है।

हम जानते हैं कि मानव जीवन में सामाजिक पक्ष अधिक प्रभावित करता है। राजनीति, धर्म, अर्थ आदि का केन्द्र समाज ही होता है। समाज के अभाव में मानव जीवन की कल्पना व्यर्थ है। इसी समाज को अनेक जातियों एवं जन्म आधारित व्यवसाय में बाँटकर सत्ता स्थापित किया जाता है। इस सन्दर्भ में डॉ0 लोहिया जी का मत है–''जन्मजात या धार्मिक वर्गीकरण, वर्णों का आवश्यक गुण नहीं है। वर्ग और वर्ण में घनिष्ठता होती है। अस्थिर वर्ण को वर्ग कहते हैं, स्थायी वर्ग वर्ण कहलाते हैं। प्रत्येक समाज में वर्ण से वर्ग और वर्ण से वर्ग का बदलाव हुआ है। यही परिवर्तन लगभग सभी आन्तरिक घटनाओं की जड़ में रहता है। यह करीब–करीब हमेशा ही न्याय और बराबर के मार्गों से प्रेरित होता है।''[3] आधुनिक भारतीय समाज में भी जाति, धर्म, लिंग, अर्थ आदि आधार पर भेदभाव देखने को मिलता है।

समाज में व्याप्त गतिविधियों का चित्रण साहित्य करता है। समाज सम्मत एवं समाज विरोधी दोनों विचारों को जन समूह के सामने रखता है। हिन्दी साहित्य के प्रत्येक विधाओं में सामाजिक व्यवस्था का वास्तविक परिदृश्य दिखाया गया है। इन विधाओं में हिन्दी उपन्यास महत्वपूर्ण है क्योंकि अधिकांश उपन्यासों में कुछ न कुछ सामाजिक ढाँचे का वर्णन अवश्य रहता है। जहाँ तक रामधारी सिंह दिवाकर लिखित हिन्दी उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' की बात की जाय, यह उपन्यास पूर्णतः सामाजिक सत्ता पर केन्द्रित है। लेखक ने समाज के प्रत्येक पक्ष को छूने का प्रयास किया है। समाज में रोटी, कपड़ा एवं मकान से लेकर सर्वोच्च सत्ता तक का वर्णन किया है। उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' में प्रमुख पात्र माई और कजरी सामाजिक समरसता के प्रतीक हैं तो नन्दू, डायमण्ड, लूचायराम एवं बैताल सिंह जैसे पात्र व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए जीते हैं। ग्रामीण सामाजिक संरचना पर लिखा गया उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' में जातीय भेदभाव को दिखाया गया है। भारतीय स्वतंत्रता के बाद समाज में उच्च जातियों का वर्चस्व था। उपन्यास में लेखक भुदनियाँ जमींन की चर्चा किया है जिस पर गांव के गरीब लोग खेती बाड़ी करके जीवन यापन करते थे। उस पर राजपूतों ने जबरदस्ती कब्जा कर लिया–''राजपूत है तो राजपूती शान भी बनाए रखें। भुदनियाँ जमींन पर कब्जा करें चाहे जितना खून करना पड़े।''[4] इसी प्रकार के सामाजिक व्यवस्था में उच्च जातियों का अत्याचार लेखक ने कई स्थानों पर वर्णन किया है। एक जमींदार हरिशंकर शर्मा के बारे में लिखता है–''जमींदार हरिवंश शर्मा जब शिकार के लिए निकलते थे तो किसी गरीब के बच्चे को लेते थे, लेते क्या थे उठा लेते थे जबरदस्ती और जंगल में किसी पेड़ में बच्चे को बांध देते थे। बच्चा चीखता चिल्लाता था। बाघ बच्चे की आवाज सुनकर कहीं से निकलता। बच्चे पर झपट्टा मारता कि छिपकर बैठे हरिवंश बाबू की बन्दूक की गोलियों की धाँय–धाँय। बच्चा तो मर ही जाता था।''[5] यहाँ उच्च जातियों के क्षणिक आनन्द में गरीब जातियों का शोषण दिखाया है। उच्च जातियों का मानना है कि वर्चस्व कायम रखना है तो शोषित जातियों को प्रताड़ित करते रहो।

लेखक रामधारी सिंह दिवाकर ने उपन्यास में शोषित वर्ग का तात्पर्य दलित के साथ गरीब जनसमुदाय से जोड़ा है। उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' की प्रमुख पात्र कजरी दलित चेतना की प्रतीक है। उसकी बातों में संघर्ष दिखाई देता है–''गाँव में आप लोग जन मजूर को जीने नहीं देगीं तो जाएँगे नहीं दिल्ली, पंजाब, हरियाणा? आप लोग तो चाहबे करती हैं कि गरीब–गुरबा यहीं मरें–खपें।''[6] लेखक ने कजरी के माध्यम से एक नयी सामाजिक व्यवस्था की कल्पना की है जो जाति के अलगाव से दूर समानता का भाव है। लेखक के समाज में किसी व्यक्ति या जाति की सत्ता नहीं होनी चाहिए। इन सभी बातों को अपने पात्र कजरी के माध्यम से कहता है। ''यह जात–पात गाँव देहात में ही इतना बेसी है। जाकर देखे कोई दिल्ली में कौन किस जात में शादी करता है, इससे किसी को

लेना–देना नहीं निमन्त्रण दो, सब आएंगे। कोई पूछेगा नहीं कि कौन किस जात का है। ई सब बखेड़ा गाँव देहात में है।''[7] भारतीय समाज की जाति व्यवस्था को उजागर करने में लेखक कोई कसर नहीं छोड़ा है। उपन्यास में उच्च सरकारी पद पर आसीन दलित युवक विनोद एवं ब्राह्मण कन्या कलावती के प्रेम विवाह का वर्णन है। दोनों विवाह के उपरान्त शहर में रहते हैं। यहां पर कलावती के मन का भाव उच्चता की ओर होता है। कलावती अपने माता–पिता की इज्जत एवं सेवा करती है परन्तु सास–ससुर को दलित समझकर अपमानित करती है। विनोद अपने घर रिश्तेदार भोला को नौकर की भांति रखता है तो कलावती अपने रिश्तेदार बमबम को ले आती है। लेखक दोनों नौकरों के साथ अलग–अलग व्यवहार का चित्रण करके जातीय भेदभाव को उजागर किया है। एक उच्च सरकारी पद पर आसीन व्यक्ति के घर के अन्दर की कहानी से सामाजिक एवं पारिवारिक स्थिति को सामने रखा गया है। दलित अफसर का पिता सोचता है ''इस पंडितवा को बहू अन्दर बुलाती है खाने के लिए अन्दर। शीशे की बड़ी सी एक गोल टेबुल है। टेबुल के चारों तरफ पाँच–छह कुर्सियाँ लगी हुई है। एक कुर्सी पर बहू बैठेगी, दूसरी कुर्सी पर लेलहा पंडित बैठेगा। खाना परोसेगा बमबम झा और झूठे बर्तन उठाकर ले जाएगा भोला।''[8]

लेखक रामधारी सिंह दिवाकर जातीय समीकरणों के लिए अन्तर्जातीय विवाह की स्वीकृत दिया है। विशेषकर बड़ी कही जाने वाली लड़कियों का विवाह दलित युवकों से। लेखक एक ओर चन्द्रदेव झा की बेटी का छोटी कही जाने वाली जाति के मास्टर से विवाह सम्बन्ध न होने पर उसकी आत्महत्या तो दूसरी ओर खड्गनाथ झा की छोटी पुत्री कलावती के सुख–सुविधा का वर्णन किया है। यह इक्कीसवीं सदी के बदलते सामाजिक परिवेश का चित्रण है।

हिन्दी उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' में गाँव के सामाजिक सत्ता का यथार्थवादी दृष्टि से उल्लेख किया गया है। कुछ राजनेता सामाजिक बदलाव की बात करते है परन्तु लेखक ने राजनेताओं के बात को काल्पनिक सिद्ध करने का प्रयास किया है। उपन्यास में एक पात्र बुद्धन माँझी है। वह सामाजिक व्यवस्था के बदलाव की बात करने वाले राजनेताओं से पूछता है– ''हमको खाली यह बता दीजिए हजूर कि जब आप लोगन का राज आएगा तो क्या पैला में जो आँटा सटा रहता है, वह हटा दिया जाएगा ..... कि आप लोगन का राज आएगा तो क्या बाबू–बबुआन के लड़के जो हमारे टोले में आकर अपना जाँच करते हैं कि ऊ शादी कि लायक हुए हैं कि नहीं.. क्या यह बन्द हो जाएगा? बस इहे दूर गो सवाल हजूर। और कुछ नहीं। और कुछ नहीं।''[9] लेखक की दृष्टि से भारत में सामाजिक व्यवस्था के बदलाव की आवश्यकता है न कि राजनीतिक सत्ता की। राजनीतिक सत्ता बदलने से भी सामाजिक सत्ता में बदलाव नहीं आ रहा है। सामाजिक सत्ता के बदलाव के लिए क्षेत्रीय स्तर पर कार्य करने की जरूरत है।

अकाल सन्ध्या में छुआछूत का चित्रण मिलता है। महावीर हिन्दू से मुसलमान बन गया। परिणामस्वरूप किसी उत्सव में जाने पर उसके साथ सौतेला व्यवहार किया जाता है। जब वह भोजन के लिए पंगत में बैठता था तो उसको थाली न देकर पत्तल दिया जाता था। ''दाल–भात–तरकारी परोसने वाले बारिक कोशिश करते थे कि कोई चीज महाबिर मियाँ से छुआ न जाय, इसलिए वे दूरी बनाकर भात–दाल वगैरह परोसते थे।''[10] इसी प्रकार विनोद एवं कलावती के बेटे बबलू के बारे स्वयं उसके नाना सोचकर कुंठित होते हैं। पंडित खड्गनाथ झा अपने नाती के बारे में सोचते हैं–''सब कुछ तो है लेकिन जाति? क्या जाति कही जाएगी बबलू की? जाति तो पिता से मानी जाती है और पिता की जाति?.. घृणा से पंडित खड्गनाथ झा के कमरे में दूसरी तरफ की चौकी पर सोये झौली मड़र को देखा। जाति के खवास। जूठे बर्तन माँजने–धोने वाला। जूठा खाने वाले जाति।''[11] लेखक रामधारी सिंह दिवाकर गांव के गरीबों में एकता दिखाने का प्रयास करते हैं। एक बार जब कजरी रात को रास्ता भूल जाती है तो मजदूरों के बस्ती में पहुँच जाती है। वहां पर लेखक मजदूरों के भावों का वर्णन किया है। कजरी अपरिचित मजदूरों में स्वयं को सुरक्षित पाती है। सभी मजदूर मिलकर कजरी की सहायता करते हैं। कजरी भी मजदूरों पर विश्वास करती है। ''विश्वास है भैया, अपना–अपना विश्वास है। मैं भी मजूर हूँ। मजूर की घरवाली हूँ। जानती हूँ कि जन–मजूरों के बीच कोई सतायी हुई औरत पहुँच जाय तो माँ–बहिन ही समझी जाएगी। विश्वास है मेरा। पक्का विश्वास है।''[12] उपन्यास में पात्र कजरी का चित्रण क्रान्तिकारी एवं संघर्षशील महिला के रूप में किया गया है।

रामधारी सिंह दिवाकर ने अपने उपन्यास में पुरूषवादी सत्ता का भी वर्णन किया है। पिछड़ों का नेता डायमण्ड ने तीन महिलाओं को पत्नी के रूप में रखा था। ''एक पत्नी गाँव में, दूसरी पटने में और तीसरी उपपत्नी दिल्ली में।'' यह पुरूष जाति का स्त्रियों के प्रति शोषण है। उपन्यास में कई स्थानों पर पुरूष वर्चस्व का दिखाया गया है। स्त्रियां पुरूषों का अनुकरण मात्र करती है। ऊँची जाति के लोग निम्न समझे जाने वाली जाति की महिलाओं पर कुदृष्टि रखते हैं। लेखक उपन्यास में खवास टोले को उच्च वर्गों का ऐशगाह दिखाने का प्रयास किया है।

इक्कीसवीं सदी के सामाजिक बदलाव में एक महत्वपूर्ण बात सामने आयी है। इसे वर्णन करने में रामधारी सिंह नहीं चूके है। 'अकाल सन्ध्या' में कई निम्न जाति के लोगों के पास धन, वैभव आ जाता है। वे भी वही कार्य करते हैं जो पहले राजपूत, बबुआन लोग करते थे। एस0पी0 रामबरन राम का पिता लुचायराम पहले शादी समारोह में पिपही बजाता था। पुत्र के अफसर बनने के बाद गरीब लड़कियों–महिलाओं के साथ व्यभिचार करने लगा। गांव की सामान्य जनता पर अत्याचार करने लगा। उपन्यास में समरसता की प्रतीक प्रमुख पात्र माई ने कहा–''मरने वाली मुसहर की बेटी, मारने वाला चमार और बीच में दलाली करने वाले दुसाध और पासी। इनमें सब एक ही वर्ग के हैं।''[13] यहां लेखक सिद्ध किया है कि सामाजिक सत्ता में जाति या ऊँच–नीच का प्रभाव नहीं पड़ता है। कोई भी व्यक्ति जो अत्याचारी है, विरोध होना चाहिए। धन की अधिकता व्यक्ति में सत्ता स्थापित करने का भाव लाती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि रामधारी सिंह दिवाकर द्वारा लिखित हिन्दी उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया है। समाज में व्याप्त सत्तात्मक प्रवृत्ति का तत्कालीन परिस्थिति में चित्रण किया गया है। वर्तमान समाज में ऊँच–नीच की स्थितियों में बदलाव हो रहा है। भारतीय स्वतंत्रता के समय की जो जातियाँ उच्चता के स्थान पर थी उनमें गिरावट आ रही है। निम्न समझी जाने वाली जातियों में से कुछ व्यक्ति उच्च स्थानों पर पहुँच गए है। वे भी वही कार्य कर रहे हैं, जिसके विरोध स्वरूप सत्ता प्राप्त किये हैं। समाज में अन्तर्जातीय विवाह को बढ़ावा मिल रहा है, उन्हें जीवन जीने से कोई नहीं रोकता है, जातीय बन्धन धीरे–धीरे टूट रहा है, शहरों की बराबरी वाली प्रवृत्ति गाँवों में जाने से समानता व्याप्त हो रही है, श्रेष्ठता परक जातीय वर्चस्व टूट रहा है। इन सबका बखूबी अनुभव लेखक रामधारी सिंह दिवाकर को है। हिन्दी उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' में सम्पन्न वर्ग के परिवार से लेकर मजदूर तक अर्थात् जमींदार से लेकर हलवाहे तक का यथार्थवादी ढंग से चित्रित किया है। समाज में व्याप्त अच्छाई एवं बुराई दोनों का बखूबी वर्णन मिलता है। अतः हिन्दी उपन्यास 'अकाल सन्ध्या' में इक्कीसवीं सदी के ग्रामीण सामाजिक सत्ता का पूर्ण दर्शन होता है।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ0 रामजी मिश्र– 'धर्म और राजनीति' आचार्य प्रकाशन, इलाहाबाद (2001), पृ0 101

2. विष्णु प्रभाकर– 'संस्कृति क्या है?' सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली (2007), पृ0 84
3. रविशंकर सिंह– 'डॉ0 राम मनोहर लोहिया का सामाजिक चिन्तन', (लेख) श्री प्रभु प्रतिभा शोध पत्रिका, भाग–13, अक्टूबर–दिसम्बर 2011, पृ0 75
4. रामधारी सिंह दिवाकर–'अकाल सन्ध्या', भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली (2006), पृ0 76
5. वही, पृ0 256
6. वही, पृ0 28
7. वही, पृ0 67
8. वही, पृ0 144
9. वही, पृ0 14
10. वही, पृ0 17
11. वही, पृ0 143
12. वही, पृ0 107
13. वही, पृ0 258